UGC NET - HISTORY
SAMPLE THEORY
PAPER - III

- शक्तियों का उदय

VPM CLASSES
For IIT-JAM, JNU, GATE, NET, NIMCET and Other Entrance Exams
1-C-8, Sheela Chowdhary Road, Talwandi, Kota (Raj.) Tel No. 0744-2429714
Web Site www.vpmclasses.com E-mail-vpmclasses@yahoo.com

शक्तियों का उदय

भारत में पुर्तगालियों का आगमन :

अरबों ने मुगलों की पतनावस्था का लाभ उठाकर यूरोप जाने वाले स्थलीय व्यापारिक मार्गों पर अधिकार कर लिया तब भारत व यूरोप के मध्य सीधा व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित करने के लिए नये मार्गों के खोज की आवश्यकता पड़ी। पुर्तगाली व्यापारियों ने अन्य यूरोपीय कम्पनियों से बाजी मार ली और 17 मई, 1498 ई. को वास्कोडिगामा ने उत्तम आशा अंतरिप होते हुए कालीकट नामक बन्दरगाह पर पुर्तगाल से समुद्री मार्ग द्वारा भारत पहुँचा, जहाँ उसका कालीकट के शासक जमोरिन द्वारा स्वागत किया गया। इस प्रकार भारत व यूरोप के मध्य वास्कोडिगामा ने सीधा समुद्री व्यापारिक मार्ग की खोज की। वास्कोडिगामा के अनुरोध पर कालीकट के जेमोरिन ने पुर्तगालियों को कालीकट में बसने और व्यापार करने की सुविधा प्रदान की, जिसका अरबों ने विरोध किया इसके बावजूद भी पुर्तगाली शक्ति का निरन्तर विस्तार किया होता रहा।

भारत में पुर्तगाली शक्ति का विस्तार निम्नलिखित चरणों में हुआ –

- **प्रथम चरण (1498–1505 ई.)**

  इस काल में पुर्तगाली व्यापारियों की प्रमुख नीति शास्त्र व्यापार की नीति थी। इसके अनुसार प्रत्येक वर्ष एक सशस्त्र पुर्तगाली जहाज भारत आता और यहाँ से माल लेकर पुर्तगाल चला जाता था और भारत में अपनी शक्ति का विस्तार करने का प्रयास करता। उन्होंने कालीकट, कोचीन, कन्नौर में इस अवधि में अपनी व्यापारिक किलेबन्द कोठियाँ स्थापित कर ली तथा कोचीन के जेमोरिन से अपनी घनिष्ठता स्थापित कर पुर्तगालियों ने कालीकट के जेमोरिन और अरबों के हितों को नुकसान पहुँचाना प्रारम्भ कर दिया।

- **द्वितीय चरण (1505 – 1509 ई.)**

  1505 ई. में पुर्तगाल ने डी–अल्मेडा को भारतीय पुर्तगाली क्षेत्रों का गर्वनर नियुक्त किया। अल्मेडा ने भारत आकर 'नीले पानी की नीति' का अनुसरण किया। उसकी इस नीति का उद्देश्य हिन्द महासागर में पुर्तगाली शक्ति को सर्वश्रेष्ठ बनाना था। उसने अपनी इस नीति के तहत मालाबार तट व अफ्रीका के पूर्वी तट पर अपना अधिकार जमा लिया और अरबों की ताकत को नष्ट करने का प्रयास किया। 1509 ई. में वह वापस पुर्तगाल चला गया।

- **तृतीय चरण (1509 – 1515 ई.)**

  अल्मेडा के बाद भारत में पुर्तगाली गवर्नर अल्फांसो–डी–अल्बुकर्क आया और इसने पुर्तगाली शक्ति का विस्तार करने के लिए साम्राज्यवादी नीति का अनुसरण किया। इस हेतु उसने 1510 ई. में बीजापुर से गोआ छीन लिया। इसके अलावा उसने मलक्का और फारस की खाड़ी में होरमुज द्वीप अधिकार कर कोचीन में एक मजबूत किले का निर्माण करवाया। गोआ में उसने पुर्तगालियों की संख्या बढ़ाने के लिए भारतीय स्त्रियों से पुर्तगालियों की संख्या बढ़ाने के लिए भारतीय स्त्रियों से पुर्तगालियों के विवाह को प्रोत्साहित किया। उसके इन सब प्रयासों से भारत में पुर्तगालियों की स्थिति मजबूत हो गई।

- **चतुर्थ चरण**

  1515 ई. अल्बुकर्क की मृत्यु हो जाने के कारण लोपासारस गवर्नर बना। उसके समय में श्रीलंका, चटगाँव, बम्बई, मद्रास, हुगली आदि स्थानों पर पुर्तगाली आधिपत्य कायम हुआ। इसके अतिरिक्त दमन, दिव, सालसिट, बेसिन आदि स्थानों पर भी उनका अधिकार जम गया।

भारत में पुर्तगालियों के पतन के निम्नलिखित कारण थे –

- पुर्तगालियों के पतन का सर्वाधिक उल्लेखनीय कारण 1580 ई. में स्पेन द्वारा पुर्तगाल पर अधिकार कर लिया था। स्पेन के शासकों ने भारतीय व्यापार और उपनिवेश की स्थापना में कोई रूचि नही प्रकट की। इससे उनके भारतीय व्यापारिक केन्द्रों को कोई आवश्यक सहायता न मिल सकी, जिसके कारण उनके केन्द्रों में अव्यवस्था उत्पन्न हो गई। डचों तथा मराठों ने उनके केन्द्रों पर अधिकार कर लिया।
- विजयनगर साम्राज्य के शासक पुर्तगालियों को अनेक प्रकार की सुविधाएँ प्रदान करते थे, परन्तु 1565 ई. के राक्षसी तंगड़ी युद्ध के बाद विजयनगर साम्राज्य का अस्तित्व समाप्त हो गया। इससे पुर्तगालियों को अब कोई सुविधा स्थानापन्न शासकों द्वारा नहीं मिली।
- अल्बुर्क के बाद भारत में आने वाले पुर्तगाली अधिकारियों में योग्यता का अभाव था। फलतः वे साम्राज्य के हितों की रक्षा नहीं कर सके।
- पुर्तगालियों के अधिकारी भ्रष्ट, रिश्वतखोर एवं लालची थे। उनके केन्द्रों में समुचित न्याय और शन्ति–व्यवस्था के उपाय नहीं किये गये। इस कारण से उन्हें कोई भी जनसमर्थन नहीं मिला।
- पुर्तगाल एक छोटा सा देश होने के कारण उसके साधन भी अत्यन्त सीमित थे। यूरोप से भारत की इतनी अधिक दूरी थी कि सीमित साधनों से इस पर नियन्त्रण रखना अत्यन्त कठिन था।

- नये देशों की खोज के क्रम में पुर्तगालियों ने ब्राजील को खोज लिया, इससे उनका ध्यान भारत की तरफ से हटकर ब्राजील की ओर हो गया।
- भारत में पुर्तगालियों को पहले मुगलों की संगठित शक्ति और बाद में मराठों का सामना करना पड़ा। इन दोनों ताकतों के सम्मुख उनको भारत में पाँव जमाने का अवसर नहीं मिल सका।
- पुर्तगालियों के पतन में उसके यूरोपीय प्रतिद्वन्द्वियों ने महत्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाई, अंग्रेज, डच, फ्रांसीसी आदि पुर्तगालियों से अधिक शक्तिशाली थे। अंग्रेजों ने सभी यूरोपीय कम्पनियों को भारत में हरा दिया।
- पुर्तगालियों के पतन में उनकी धार्मिक नीति भी उत्तरदायी थी। उन्होंने भारतीयों को जबरदस्ती ईसाई बनाना प्रारम्भ कर दिया। इससे उनके प्रति जनता में घृणा फैल गयी। वे भारतीयों के साथ क्रूरतापूर्ण व्यवहार करते एवं लूट–खसोट कर सम्पत्ति अर्जित करते थे।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि पुर्तगालियों की चारित्रिक और प्रशासनिक दुर्बलताएँ उनकी धर्मान्धता तथा भारतीय शक्तियों और उसके यूरोपीय प्रतिद्वन्द्वियों आदि ने मिलकर उनका भारत में पतन कर दिया।

भारत में डच शक्ति की स्थापना तथा पतन :

भारत में व्यापार करने के उद्देश्य से 1592 ई. में हॉलैण्ड के एमस्टरडम के व्यापारियों ने एक व्यापारिक कम्पनी की स्थापना की और 1595 ई. में पहला डच जहाजी बेड़ा कोरनिलियन हाउतमैन के नेतृत्व में हॉलैण्ड से भारत के लिए चला और पूर्वी द्वीपसमूहों से व्यापार कर 1597 ई. में वापस लौट गया। उसकी इस यात्रा से उनको काफी लाभ हुआ। इससे उत्साहित होकर 20 मार्च, 1602 ई. को राजकीय घोषणा के आधार पर 'यूनाइटेड ईस्ट इण्डिया कम्पन ऑफ दी नीदरलैण्ड' की स्थापना की गई और इसे युद्ध चलाने, सन्धि करने, प्रदेशों पर अधिकार करने, और किलेबन्दी करने का अधिकार दिया गया। डच कम्पनी का प्रारम्भ में उद्देश्य भारत के साथ व्यापार करना था। अतः उन्होंने कोरोमण्डल तट,गुजरात, बंगाल आदि स्थानों पर अपनी व्यापारिक कोठियाँ स्थापित की। कुछ समय बाद पुलीकत, सूरत, चिनसुरा, कासिम बाजार, पटना, बालासोर, बारानगर,इ नागापट्टम और कोचीन आदि पर भी उनकी कोठियाँ स्थापित कर दी। इन बस्तियों की स्थापना से पूर्वी द्वीपसमूहों के मसाले के व्यापार पर उनका एकाधिकार स्थापित हो गया।

डच–पुर्तगाल संघर्ष – डचों के आगमन से पूर्व भारत में व्यापार पर पुर्तगालियों का एकाधिकार था। इससे उनका व्यापार पुर्तगालियों के कारण सुरक्षित नहीं रख सकता था। अतः उन्होंने स्थानीय शासकों से मित्रता की और जनता को उनके विरूद्ध भड़काकर पुर्तगाली क्षेत्रों पर अधिकार प्रारम्भ कर दिया। 1605 ई. में डचों ने पुर्तगालियों से आम्बियाना ले लिया तथा मसाले के द्वीपों से उन्हें बाहर कर दिया। 1619 ई. में उन्होंने जकार्ता पर अधिकार कर लिया और वहाँ बाटाविया नामक नगर बसाकर उसे अपनी सत्ता का प्रमुख केन्द्र बना दिया। गोआ पर आक्रमण किया (1639 ई.), 1641 ई. में उन्होंने मलक्का पर अपना अधिकार जमा लिया,1658 ई. में लंका पर भी अधिकार कर पुर्तगाली शक्ति को नष्ट कर दिया। 1664 ई. तक मालाबार तट पर पुर्तगालियों के अधिकांश क्षेत्र डचों के अधीन हो गये और इससे डचों की शक्ति का विस्तार हो गया।

अंग्रेज व डच – डचों की निरन्तर विस्तारवादी नीति के कारण उनका अंग्रेजों से भी संघर्ष प्रारम्भ हो गया। अतः डचों ने अंग्रेजों को मसाले के द्वीपों से दूर रखने के लिए डचों के गवर्नर रेण्टा ने वहाँ के सरदारों को दण्डित किया, क्योंकि वे अंग्रेजों से व्यापार करते थे और अंग्रेजों को ओम्बियाना से खदेड़ दिया। 1618 ई. के युद्ध में अंग्रेजों को डचों ने थल व जल दोनों युद्धों में परास्त कर दिया। अतः 1619 ई. में अंग्रेजों को डचों से सन्धि करनी पड़ी, लेकिन कुछ समय के बाद डचों के लंतोर व नुलोरेन से अंग्रेजों को खदेड़ दिया। ओम्बिना के डच गवर्नर बेंसपेल्ट ने अठारह अंग्रेजों पर डच किले पर हमला करने का झूठा आरोप लगाया और उनसे अपराध कबूलवाने के लिए अत्याचार किये गये और अन्त में उन्हें मृत्युदण्ड दे दिया गया। इस घटना से अंग्रेजों ने अपना ध्यान धीरे–धीरे मसाले के द्वीपों से हटाकर भारत की तरफ कर दिया और यहाँ भी उनका डचों से संघर्ष चलता रहा, लेकिन 1760 के बेदारा के युद्ध में डचों को अंग्रेजों ने निर्णायक रूप से परास्त कर भारत से खदेड़ दिया।

- **डचों की असफलता के कारण –**

डचों की असफलता के लिए अनेक कारण उत्तरदायी थे। सर्वप्रथम डच कम्पनी के स्वरूप ने उसके लिए पतन निश्चित कर दिया। यह एक सरकारी कम्पनी थी और उस समय हालैण्ड की सरकार यूरोप की राजनीति में बूरी तरह से फँसी हुई थी। उसे हमेश इंग्लैण्ड और फ्रांस के साथ युद्ध रत में रहना पड़ रहा था। फलतः सरकार डच कम्पनी के आर्थिक हितों की रक्षा करने में असमर्थ हो गयी और न ही उसकी आवश्यकता के समय उसकी कोई सहायता ही कर पाया।

डच कम्पनी के पतन में उसके भ्रष्ट एवं अयोग्य उत्तराधिकारियों का भी महत्वपूर्ण योगदान था। उनमें देश–भक्ति की भावना का सर्वथा अभाव था। वे लोग सदैव अपनी स्वार्थ पूर्ति में लगे रहते थे। डच कम्पनी के पतन में अंग्रेजों से उनके हुए संघर्ष का भी उल्लेखनीय योगदान था। अंग्रेज डचों की अपेक्षा अधिक दूरदर्शी एवं व्यावहारिक थे। उनके पास योग्य कूटनीतिज्ञों की सेवाएँ विस्तृत साधन थे, जलशक्ति में उनका सामना विश्व का उस समय कोई भी देश नहीं कर सकता था। अंगेजों ने भारत में ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी जिससे कि डचों को भारत में अपना राज्य स्थापित करने का स्वप्न त्यागकर मसाले के द्वीपों पर निर्भर रहने के लिए बाध्य हो जाना पड़ा।

भारत में अंगेजों का आगमन विस्तार :

भारत से व्यापार के कारण पुर्तगालियों एवं डचों की बढ़ती हुई समृद्धि ने अंग्रेजों को भारत से व्यापार करने को प्रेरित किया। अतः 31 दिसम्बर 1600 ई. में भारत एवं पूर्वी–द्वीपसमूहों से व्यापार करने के उद्देश्य से इंग्लैण्ड के कुछ व्यापारियों ने मिलकर एक कम्पनी 'ईस्ट इण्डिया कम्पनी' या 'दी गवर्नर एण्ड कम्पनी ऑफ मर्चेण्ट्स ट्रेडिंग इन टू ईस्ट इण्डीज' बनाई। जिसे रानी एलिजाबेथ ने अपनी स्वीकृति प्रदान कर दी।

1608 ई. में हॉकिन्स के नेतृत्व में अंग्रेजी जहाज 'हेक्टर' सूरत पहुँचा और उसने मुगल सम्राट जहाँगीर से भेंट कर अपने सम्राट जेम्स प्रथम का पत्र दिया और व्यापार करने की अनुमति मांगी। 6 फरवरी 1613 ई. को जहाँगीर ने अंगेजों को सूरत में फैक्टरी खोलने एवं मुगल दरबार में अपना राजदूत रखने की अनुमति प्रदान कर दी, किन्तु इसे पुर्तगालियों के कहने पर रद्द कर दिया गया। 1615 ई. में सर टामस रो ब्रिटेन के सम्राट के राजदूत की हैसियत से जहाँगीर से मिला, यह एक चालाक, व्यवहार कुशल और धूर्त व्यक्ति था। उसने अपनी बुद्धिमानी से जहाँगीर से भारत में कोठियाँ खोलने की अनुमति प्राप्त कर ली तथा अंग्रेजों की सुरक्षा का दायित्व भी अपने ऊपर ले लिया। इससे अंग्रेजों को व्यापारिक लाभ मिला और टोमस रो के वापस जाने (1619 ई.) तक सूरत के अलावा आगरा, भड़ौच, अहमदाबाद आदि स्थानों पर अंग्रेजों के व्यापारिक केन्द्र स्थापित हो चुके थे। धीरे–धीरे अंग्रेजों ने व्यापारिक केन्द्रों की स्थापना का कार्य जारी रखा और 1631 में मछलीपट्टम्, 1633 मे हरिपुर और बालासोर तथा 1640 ई. में चन्द्रगिरि के राजा से मद्रास खरीदकर अपनी कोठियाँ स्थापित की। उन्होंने मद्रास में ही सेंट जार्ज नामक किले का निर्माण भी करवाया। अंग्रेजों ने 1651 ई. में हुगली, पटना,

कासिम बाजार में भी अपनी कोठियाँ स्थापित की। हुगली में ही आज कोलकाता नगर बसा हुआ है। 1661 ई. में इंग्लैण्ड के राजा चार्ल्स द्वितीय का विवाह पुर्तगाली राजकुमारी कैथरीन से होने के पर उसे बम्बई का द्वीप दहेज में मिला जिसे कम्पनी ने 10 पौण्ड वार्षिक किराये की दर से लिया। 1661 ई. में ही कम्पनी ने सम्राट चार्ल्स द्वितीय से सिक्के ढालने, किलेबन्दी करने, पूर्व में बसने वाली अंग्रेजी प्रजा पर भी न्याय का शासन चलाने और अक्रिस्तान राष्ट्रों के साथ युद्ध एवं सन्धि करने का अधिकार प्राप्त कर लिया।

इन सभी से कम्पनी की स्थिति मजबूत हो गई और अब वह व्यापारिक कम्पनी के साथ एक राजनीतिक शक्ति बन गई और अपनी सुरक्षा के लिए उसने अन्य किसी पर निर्भर न रहने के स्थान पर स्वयं तैयार होने लगी। इस उद्देश्य से जब मुगलों ने चटगाँव और पुर्तगालियों ने सालसेट अंग्रेजों से लेने का प्रयास किया तब अंग्रेजों ने उनके विरूद्ध कार्यवाही की और बालासोर में मुगल किलेबन्दी को 1688 ई. में केप्टन हीथ के नेतृत्व में नष्ट कर दिया। इसी वर्ष अंग्रेजों ने सूरत में मुगल जहाजों को लूट लिया। इससे 1690 ई. में औरंगजेब ने अंग्रेजों द्वारा क्षमा माँगे जाने पर और हर्जाना चुकाने पर उन्हें निर्बाध रूप से व्यापार करने की अनुमति प्रदान कर दी। इसी प्रकार से 3000 रूपये सालाना चुंगी के बदले बंगाल में भी अंग्रेजों को व्यापार करने की अनुमति मिल गई। 1699 ई. में अजीम–उस–शान ने 1300 रूपये सुतानुती, गोविन्दपुर और कालीकाता के गाँवों की जमींदारी खरीदने की आज्ञा प्रदान कर दी और अंग्रेजों ने 1700 ई. में यहाँ फोर्ट विलियम दुर्ग का निर्माण करा दिया, जो बंगाल प्रेसीडेन्सी का प्रमुख केन्द्र बन गया।

इस प्रकार उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि अंग्रेजों के इन प्रारम्भिक कार्यो से उनकी स्थिति भारत में अत्यन्त सुदृढ़ हो गई और वे अब देशी और विदेशी दोनों शक्तियों का मुकाबला करने में अपने स्वयं के साधनों से सक्षम हो गये।

भारत में फ्रांसीसी कम्पनी स्थापना :

भारत में यूरोपीय कम्पनियों के आगमन के क्रम में फ्रांसीसी सबसे बाद में आये। उन्होंने अन्य यूरोपीय कम्पनियों को भारतीय व्यापार से लाभ कमाते देखकर 1611 ई. में मेडागास्कर में उपनिवेश स्थापित करने एवं भारत से व्यापार करने के लिए एक कम्पनी खोली, जो शीघ्र ही असफल हो गई। 1642 ई. में फ्रांस के मन्त्री रिशालू ने पुनः व्यापार के उद्देश्य से तीन कम्पनियों की स्थापना की, जो कि अपने

उद्देश्यों में सफल नहीं हो सकी। अन्त में 1644 ई. में फ्रांस के सम्राट लुई 14वें के शासनकाल में उसके मंत्री कालबर्ट ने फ्रांसीसी ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना की, जिसके निम्नलिखित तीन प्रमुख उद्देश्य थे –

(i) राजनीतिक शक्ति की स्थापना,

(ii) राजा की शक्ति को और सबल बनाना एवं

(iii) ईसाई धर्म का प्रचार और प्रसार करना।

1667 ई. में फ्रांसीसी ईस्ट इण्डिया कम्पनी के डायरेक्टर जनरल फ्रांसिस कैरन ने भारत के लिए प्रस्थान किया और 1668 ई. में उसने सूरत में एक फ्रांसीसी कोठी की स्थापना की। उसके प्रयासों से फ्रांसीसियों को भी वे सभी सुविधाएँ प्राप्त हो गई जो मुगलों की ओर से डच व अंग्रेजों व्यापारियों को प्रदान की गई थी। फ्रांसीसियों ने सूरत के अतिरिक्त मछलीपट्टम (1669) में अपनी दूसरी कोठी की स्थापना की। 1673 ई. में वालिकोंडपुरम के शासक से एक छोटा सा गाँव प्राप्त किया जिसमें पाण्डिचेरी की स्थापना हुई। इसके बाद फ्रांसीसियों ने चन्दन नगर, माही,द कालीकट, मारीशस आदि स्थानों पर 1739 ई. तक अपने सुदृढ़ व्यापारिक केन्द्र स्थापित कर लिये। 1740 ई. के बाद कम्पनी ने भारत की राजनीतिक अव्यवस्था का लाभ उठाकर भारतीय राजनीति मे हस्तक्षेप की योजना बनाई, जिसके कारण अंग्रेजों व फ्रांसीसियों के मध्य अनेक भीषण युद्धों का सूत्रपात हुआ और अन्ततः फ्रांसीसियों की भारत में पराजय हो गयी और भारत में अंग्रेजों की शक्ति सर्वोच्च हो गई।

दक्षिणी–भारत में प्रभुत्व स्थापित करने के लिए अंग्रेजों व फ्रांसीसियों में संघर्ष –

दक्षिणी–भारत में प्रभुत्व स्थापित करने के लिए अंग्रेजों व फ्रांसीसियों के मध्य तीन बार युद्ध हुए जिन्हें 'कर्नाटक के युद्धों' के नाम से जाना जाता है। इस युद्ध में अन्ततः अंग्रेजों को सफलता मिली, जिसके कारण भारत में फ्रांसीसियों का प्रभुत्व स्थापना का स्वप्न समाप्त हो गया और अंग्रेजों ने भारतीय साम्राज्य की व्यवस्था का मार्ग प्रशस्त किया।

प्रथम कर्नाटक युद्ध के कारण, घटनाएँ व परिणाम –

प्रथम कर्नाटक युद्ध के निम्नलिखित कारण थे –

- 1740 ई. में इंग्लैण्ड और फ्रांस में आस्ट्रिया के उत्तराधिकार के प्रश्न को लेकर युद्ध आरम्भ हो गया, अतः उसकी प्रतिध्वनि भारत में भी सुनाई दे यह स्वाभाविक ही था।

- इस समय तक मुगलों का पतन हो चुका था और दक्षिण–भारत में इस समय तक अनेक छोटे–छोटे राज्यों का उदय हो चुका था और वे आपस में सघर्षरत थे। अतः अंग्रेजों और फ्रांसीसियों दोनों ने ही उनकी कमजोरी का लाभ उठाकर साम्राज्य का स्वप्न सँजोया।
- युद्ध का तात्कालिक कारण यह था कि अंग्रेजी नौसेना ने कुछ फ्रांसीसी जलयानों को अपने अधिकार में ले लिया था।

घटनाएँ – फ्रांसीसी गवर्नर डूप्ले ने अंग्रेजों से अपने जहाजों को छुड़ाने तथा बदला लेने के लिए मारीशस के फ्रांसीसी गवर्नर से सहायता मांगी और मद्रास पर आक्रमण करने की योजना बनाई। डूप्ले और ला–बुर्डाने ने मिलकर मद्रास को जीत लिया और क्लाइव सहित अनेक अंग्रेजों को बन्दी बना लिया। अब बुर्डाने ने 4 लाख पौंड का हर्जाना वसूल कर मद्रास अंग्रेजों को लौटाकर वापस चला गया। डूप्ले ने अकेले ही मद्रास पर पुनः अधिकार कर लिया और इसके बाद उसने फोर्ट सेन्ट डेविड पर अधिकार करने का प्रयास किया जिसमें वह असफल रहा।

अब अंग्रेजों ने पाण्डिचेरी पर आक्रमण कर दिया, परन्तु उन्हें भीषण हानि उठाकर वापस लौटना पड़ा, इस पर अंग्रेजों ने कर्नाटक के नवाब अनवरुद्दीन से सहायता की याचना की। नवाब ने युद्ध बन्द करने को दोनों कम्पनियों को आदेश दिया। इस पर डूप्ले ने नवाब को यह आश्वासन दिया कि वह मद्रास को जीतकर नवाब को सौंप देगा, परन्तु उसने अपना अधिकार बनाये रखा तथा लूट का सारा माल भी स्वयं रख लिया। इस पर क्रुद्ध होकर नवाब ने डूप्ले पर आक्रमण कर दिया। सेंट थोमें नामक स्थान पर नवाब की एक बड़ी सेना को डूप्ले के सेनापति पेरोडाइज ने अपनी छोटी सी सेना से परास्त कर दिया। लेकिन इसी समय 1748 ई. में यूरोप में इंग्लैण्ड व फ्रांस के मध्य 'एक्सलशेपेल की सन्धि' हो गई, जिससे वहाँ दोनों में युद्ध बन्द हो गया। परिणामस्वरूप भारत में भी दोनों कम्पनियों में समझौता हो गया तथा संघर्ष समाप्त हो गया।

परिणाम – इस युद्ध ने भारतीयों की सैनिक दुर्बलता को स्पष्ट कर दिया तथा यह सिद्ध कर दिया कि यूरोपीय ढंग से प्रशिक्षित सेना की एक टुकड़ी एक बड़ी भारतीय फौज को हटाने के लिए पर्याप्त है। इस युद्ध ने भारतीय राजनीति के खोखलेपन को साबित कर दिया। इससे कम्पनियों की महत्वकांक्षा का अधिक विस्तार हो गया और वे अब भारतीय राज्यों की राजनीति में खुलकर हस्तक्षेप करने के लिए स्वतन्त्र हो गई।

द्वितीय कर्नाटक युद्ध के कारण, घटनाएँ एवं परिणाम –

कारण : प्रथम कर्नाटक युद्ध के बाद हुई एक्सलाशेपेल की सन्धि से स्थापित हुई सन्धि अस्थायी सिद्ध हुई तथा अंग्रेज और फ्रांसीसी दोनों ही इस अवसर की तलाश में लग गये कि अपने आधिपत्य का ओर अधिक विस्तार कैसे किया जाये।

- शीघ्र ही दोनों शक्तियों को हैदराबाद और कर्नाटक के उत्तराधिकार के युद्ध के समय यह सुअवसर प्राप्त हो गया। 21 मई, 1748 ई. के दिन हैदराबाद के निजाम आसफशाह की मृत्यु के बाद उसका पुत्र नासिर जग गद्दी पर बैठा, परन्तु निजाम के पौत्र ने इसका विरोध किया, फलतः हैदराबाद में गृह युद्ध प्रारम्भ हो गया।
- हैदराबाद के समान ही कर्नाटक में भी अशान्ति थी। कर्नाटक में अनवरूद्दीन के विरोधी स्वर्गीय नवाब दोस्तअली के दामाद चाँदा साहब को नवाब बनाने के लिए प्रयासरत थे। अतः इन परिस्थितियों का लाभ उठाकर अपने प्रभाव–क्षेत्र का विस्तार करने का फ्रांसीसी गवर्नर डूप्ले को सुअवसर हाथ लगा। इस परिस्थिति में डूप्ले ने हैदराबाद में मुजफ्फरजंग और कर्नाटक में चाँदा साहब को समर्थन देने का निश्चय कर उन्हें सैनिक सहायता देने का आश्वासन दे दिया। उसने इस कार्य का क्रियान्वयन करने के लिए सेना की एक–एक टुकड़ी दोनों स्थानों पर भेज दी।

घटनाएँ – डूप्ले, चाँदा साहब एवं मुजफ्फरजंग की संयुक्त सेना ने 1749 ई. को बेल्लोर के निकट 'अम्बर के युद्ध' में नवाब अनवरूद्दीन को परास्त कर मार डाला और चाँदा साहब ने कर्नाटक की नवाबी सम्हाल ली तथा फ्रांसीसियों को बदले में 80 गाँव प्रदान कर दिये। इसी प्रकार से डूप्ले ने नासिरजंग को हराकर मुजफ्फरजंग को हैदराबाद का निजाम बना दिया तथा उसकी सुरक्षा के लिए वहाँ एक सेना रख दी, जिसके खर्च के लिए डूप्ले ने नवाब को 4 जिले प्राप्त कर लिये। इसी बीच 1751 ई. में मुजफ्फरजंग की किसी ने हत्या कर दी। इस पर जनरल बुसी ने निजामुल्मुल्क के तीसरे पुत्र सलावतजंग को नवाब बना दिया, जिससे उत्तरी सरकार का प्रदेश फ्रांसीसियों के कब्जे में आ गया।

ऐसी परिस्थिति में अंग्रेजों की चिन्ता स्वाभाविक थी और नासिरजंग का पुत्र मोहम्मद अली उनकी शरण में था। अतः अंग्रेजों ने उसकी सहायता हेतु तैयारी प्रारम्भ कर दी। इसी समय त्रिचनापल्ली में चाँदा साहब ने अंग्रेजों को घेर लिया, लेकिन क्लाइव के साहस के सम्मुख चाँदा साहब मुश्किल में फँस गये। क्लाइव ने मद्रास के गवर्नर से आज्ञा लेकर चाँदा साहब की राजधानी आर्काट पर आक्रमण कर उसे

अपनी अधिकार में कर लिया। चाँदा साहब ने अपनी आधी सेना आर्काट भेज दी, परन्तु वह असफल रही। अब क्लाइव ने त्रिचनापल्ली पर आक्रमण कर चाँदा साहब को भागने पर विवश कर दिया और अब चाँदा साहब ने तंजौर के सेनापति के सम्मुख आत्मसमर्पण कर दिया, परन्तु उसके साथ विश्वासघात कर उसे मार डाला गया। अब मोहम्मद अली अंग्रेजों की सहायता से कर्नाटक का नवाब बन गया और फ्रांसीसी योजनाएं धरी रह गई। विजयी अंग्रेजी सेना ने फ्रासीसियों को अनेक स्थानों पर हराकर 1752 ई. तक पाण्चिेरी एवं जिंजी को छोड़कर उनके सभी स्थानों पर अधिकार कर लिया। इस पर फ्रांसीसी सरकार ने डूप्ले को वापस बुला लिया और गोडेहू को भारत भेजा। उसने आते ही 1755 ई. में अंग्रेजों से सन्धि कर ली और इस सन्धि के साथ ही दोनों पक्षों में शान्ति स्थापित हो गई।

परिणाम – इस युद्ध के अनेक महत्वपूर्ण परिणाम निकले। इस युद्ध ने फ्रांसीसियों के प्रभुत्व को कर्नाटक में पूरी तरह समाप्त करर दिया तथा साथ ही यह भी कि फ्रांसीसियो की अपेक्षा अंग्रेज अधिक शक्तिशाली है। गोडेहू ने जो अंग्रेजों से सन्धि की थी यह फ्रांसीसी प्रतिष्ठा को धूल में मिलाने वाली साबित हुई और सब अंग्रेजों को देशी नरेशों के मामले में हस्तक्षेप करने की और अधिक स्वतन्त्रता मिल गई।

कर्नाटक के तृतीय युद्ध के कारण, घटनाएँ तथा परिणाम –

कारण – 1756 ई. में यूरोप में अंग्रेजों व फ्रांसीसियों के मध्य सप्तवर्षीय युद्ध के प्रारम्भ हो जाने के कारण भारत में भी अंग्रेजों और फ्रांसीसियों के मध्य युद्ध छिड़ गया। इस समय तक प्लासी की लड़ाई जीत लेने से अंग्रेजों का मनोबल बहुत बढ़ा हुआ था। फलतः वे फ्रांसीसियों को भारत से बाहर करने के लिए कटिबद्ध हो गये।

फ्रांसीसी सरकार ने भारत में अपनी खोई हुई प्रतिष्ठा तथा शक्ति पुनः प्राप्त करने के लिए एक वीर तथा कुशल सेनापति काउण्ट लैली को भारत भेजा।

घटनाएँ – लैली ने भारत आते ही अंग्रजों के दुर्ग सेंट डेविड पर गोलाबारी कर अपना अधिकार जमा लिया और अब उसने अपना बकाया 70 लाख रूपया वसूलने के लिए तंजौर पर आक्रमण किया, जिसमें अंग्रेजों के हस्तक्षेप के कारण उसे अपनी सफलता न मिल सकी।

अपनी सहायता के लिए लैली ने जनरल बूसी को हैदराबाद से वापस बुला लिया तथा अंग्रेजों के प्रमुख केन्द्र मद्रास पर आक्रमण की योजना बनाने लगा जिसका उसके अफसरो ने पहले विरोध किया, परन्तु

1758 ई. में लैली ने मद्रास को घेर लिया। इस पर क्लाइव ने फोर्ड फ्रांसीसी बस्ती मछलीपट्टम पर अधिकार करने के लिए भेजा और अब तक एक अन्य जहाजी बेड़ा अंग्रेजों की सहायता के लिए आ गया था, इस पर लैली को अपना मद्रास का घेरा उठाना पड़ा। इसके बाद छिट–पुट संघर्ष होते रहे और अन्त में 1760 ई. में वांडीवास के निर्णायक युद्ध में अंग्रेजों ने फ्रांसीसियों को पराजित कर बुसी को कैद कर लिया और अब अंग्रजों ने पाण्डिचेरी को घेर लिया। लैली ने हैदरअली से सहायता की याचना की जिसे उसने ठुकरा दिया। अन्त में 1761 ई. में लैली ने अंग्रेजों के समक्ष आत्मसमर्पण कर दिया। अब पाण्डिचेरी पर अंग्रजों का अधिकार स्थापित हो गया। इसके साथ ही अंग्रेजों ने जिंजी और माही पर भी अधिकार कर लिया।

1763 ई. में यूरोप में दोनो पक्षों के मध्य सन्धि हो गई। अतः भारत में भी अंग्रेजों व फ्रांसीसियों के मध्य युद्ध समाप्त हो गया और पेरिस की सन्धि के अनुसार पाण्डिचेरी फ्रांसीसियों को पुनः लौटा दिया गया।

परिणाम – कर्नाटक के इस तृतीय युद्ध ने भारत में फ्रांसीसी सत्ता को हमेशा के लिए समाप्त कर दिया। फ्रांस की सरकार ने लैली की असफलता से क्रोधित होकर उसे फ्रांस बुलाकर मृत्युदण्ड दे दिया। हालांकि पाण्डिचेरी फ्रांसीसियों को वापस मिल गया परन्तु उसकी किलेबन्दी का अधिकार नहीं दिया गया। इस युद्ध की समाप्ति के साथ ही बंगाल में फ्रांसीसी प्रभाव को समाप्त कर दिया गया। अब भारत में फ्रांसीसी अधिकार में केवल चन्द्रनगर, पाण्डिचेरी, माही, मछलीपट्टम रह गये और अब वे केवल व्यापारी मात्र रह गये।

भारत में फ्रांसीसियों की असफलता के कारण –

फ्रांसीसियों की असफलता के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी थे –

1. **फ्रांसीसी कम्पनी के संगठ का दोषपूर्ण होना –** फ्रांसीसी कम्पनी एक सरकारी कम्पनी होने के कारण उसके प्रत्येक कार्य में सरकार का हस्तक्षेप होने के कारण उसके प्रत्येक कार्य में सरकार का हस्तक्षेप रहता था, जिससे उसके कर्मचारियों एवं पदाधिकारियों में आत्मविश्वास का अभाव रहता था। दूसरी तरफ ब्रिटिश कम्पनी गैर–सरकारी थी तथा उसके कर्मचारी अधिक परिश्रमी और उद्दमशील थे।

गैर–सरकारी कम्पनी होने उसकी भारतीय स्थिति में इंगलैण्ड की राजनीति का कोई प्रभाव नहीं पड़ता था।

2. **अंग्रेजों की समुद्री शक्ति का श्रेष्ठ होना** – अंग्रेजी नौसेना उस समय पूरे विश्व में सर्वश्रेष्ठ थी। अंग्रेज व्यापारियों को इससे बड़ी सुविधा थी, उनका माल कहीं भी बिना रोक–टोक के जा सकता था। फ्रांसीसी जहाजी अंग्रेजों के बेड़े के आगे टिक नहीं सकें।

3. **शक्ति का केन्द्र** – भारत में अंग्रेजों की शक्ति के तीन प्रमुख केन्द्र बम्बई, मद्रास तथा कलकत्ता थे, जो एक–दूसरे से पर्याप्त दूरी पर होने के कारण उन पर एक साथ आक्रमण नहीं किया जा सकता था, परन्तु फ्रांस की शक्ति का प्रमुख केन्द्र पाण्डिचेरी था, जिस पर अधिकार हो जाने के बाद फ्रांस की भारतीय सत्ता का अन्त होना निश्चित सा था।

4. **अधिकारियों में योग्यता की कमी** – अंग्रेजों की अपेक्षा फ्रांसीसी अधिकारी कम दूरदर्शी एवं योग्य थे। उनमें राजनीतिज्ञ के गुण का अभाव था, वहीं दूसरी ओर ईस्ट इण्डिया कम्पनी ऐसे अधिकारियों से भरी पड़ी थी। फ्रांसीसी अधिकारी आपस में स्वार्थ एवं द्वेष भावना से सदैव ग्रसित रहते थे।

5. **अंग्रेज सेना का सैनिक संगठन** – फ्रांसीसियो की अपेक्षा सेना का संगठन अधिक कुशल और अनुशासित था। अंग्रेजों के पास अस्त्र–शस्त्र भी फ्रांसीसियों की अपेक्षा उच्च स्तर के थे।

6. **कमजोर आर्थिक स्थिति** – फ्रांसीसी कम्पनी डूप्ले की योजनाओं के कारण आर्थिक संकट में फँस गई। फ्रांस की सरकार भी डूप्ले की नीति से अप्रसन्न हो गई। इससे सरकार द्वारा फ्रांसीसी कम्पनी को कोई सहायता न दिये जाने के कारण उसकी अंग्रेजों के समक्ष पराजय निश्चित हो गई

इस प्रकार स्पष्ट है कि फ्रांसीसियों को अनेक कारणों से भारत में अंग्रेजों के समक्ष पराजय का सामना करना पड़ा। इनके अतिरिक्त डूप्ले की की दोषपूर्ण योजनाएं, फ्रांस का यूरोपीय राजनीति में अधिक उलझना तथा उपनिवेशों की ओर कम ध्यान देना और उनकी अनुदार धार्मिक नीति आदि ने भी उनके पतन में अपना महत्वपूर्ण योगदान किया।

अंग्रेजों की दृष्टि में बंगाल का महत्व : कारण

भारत में अंग्रेजी राज्य की स्थापना और उसके विस्तार का क्रम बंगाल से प्रारम्भ हुआ, क्योंकि अंग्रेजों की दृष्टि में बंगाल का महत्व बहुत अधिक था। इसके सूती वस्त्रों की पूरे यूरोप के बाजारों में माँग थी। बंगाल की जमीन बहुत अधिक उपजाऊ थी। यहाँ चीनी, कपड़े, रेशम आदि व्यापारिक महत्व की वस्तुओं

का उत्पादन किया जाता था। बंगाल के बन्दरगाह बहुत अच्छे थे और हुगली से दक्षिणी–पूर्वी द्वीपों के साथ व्यापार होता था। अतः सभी ने मिलकर अंग्रेजों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया।

सिराजुद्दौला और अंग्रेजों के मध्य संघर्ष के कारण –

- सिराजुद्दौला के विरोधियों को अंग्रेजों द्वारा अपने यहाँ शरण देना सिराज व अंग्रेजों के मध्य संघर्ष का प्रमुख कारण था। घसीटी बेगम की सहायता से ढाका के दीवान राजबल्लभ ने अपार सम्पत्ति एकत्र की ली थी, जिसे कि सिराज वापस प्राप्त करना चाहता था। इस पर राजबल्लभ ने अपने पुत्र किशनदास को अपनी सारी सम्पत्ति देकर अंग्रेजों की शरण में कलकत्ता भेज दिया और जब सिराज ने किशनदास को वापस भेजने का अंग्रेजों को आदेश दिया, तब अंग्रेजों ने उसे मानने से इन्कार कर दिया। इससे दोनों के मध्य संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो गई।
- अंग्रेजों का व्यवहार सिराजुद्दौला के प्रति उपेक्षापूर्ण था। सिराजुद्दौला के गद्दी पर बैठने के समय की परम्परा का अंग्रेजों ने पालन कर उसे कोई उपहार या भेंट प्रस्तुत नहीं किया और न ही उनका कोई प्रतिनिधि उसके दरबार में उपस्थित हुआ। अंग्रेज सिराज से कोई पत्र–व्यवहार भी नहीं करते थे और जब उसने अंग्रेजों की कासिम बाजार की कोठी को देखना चाहा तो अंग्रेजों ने उसे दिखाने से स्पष्ट मना कर दिया।
- अंग्रेज व्यापारी अपनी व्यापारिक सुविधा 'दस्तक' का दुरूपयोग करने लगे थे। वे लोग कम्पनी के माल के अलावा अपने निजी व्यापार में भी अधिकाधिक इसका प्रयोग करते थे और साथ ही रिश्वत लेकर भारतीय व्यापारियों के माल को भी दस्तक से चुंगी मुक्त करा देते थे। इससे नवाब को निरन्तर आर्थिक हानि हो रही थी।

कलकत्ता पर सिराजुद्दौला का आक्रमण –

अंग्रेजों के विरूद्ध अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए सिराज शौकतजंग से निपटते हुए कलकत्ता पहुँचा और 4 जून, 1756 ई. को उसने अंग्रेजों की कासिम बाजार कोठी पर आक्रमण कर उसे अपने अधिकार में ले लिया। उसके बाद उसने कलकत्ता पर आक्रमण कर उनके दुर्ग फोर्ट विलियम को भी अपने कब्जें में ले लिया। इस पर अंग्रेज गवर्नर ड्रेक और अधिकांश अंग्रेज भागकर फुल्टा टापू पर चले गये और 20 जून, 1756 ई. को पूरे कलकत्ता पर नवाब का अधिकार हो गया। नवाब सिराजुद्दौला ने कलकत्ता का

नाम बदलकर 'अलीनगर' रख दिया तथा किले के प्रबन्ध का कार्य राजा मानिकचन्द के हाथों में सौंपकर अपनी राजधानी वापस लौट गया।

प्लासी के युद्ध और उसके परिणामों की व्याख्या –

युद्ध से पूर्व स्थिति – अलीनगर की सन्धि हो जाने के बाद भी बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला और अंग्रजों के मध्य स्थायी शान्ति कायम न हो सकी। क्लाइव ने अब बंगाल में सिराज को हटाकर उसके स्थान पर कठपुतली शासक बनाने का विचार किया। इस हेतु उसने उसके दामाद मीर जाफर को जो सिराज का सेनापति भी था, को उपयुक्त पात्र समझा। उसने अपने षडयन्त्र में सेठ अमीरचन्द और लतीफ खाँ को भी सम्मिलित किया और इनसे उसने एक गुप्त सन्धि की जिसकी शर्ते इस प्रकार थी –

1. मीर जाफर को अंग्रेजों की सहायता से बंगाल का नवाब बना दिया जायेगा।
2. मीर जाफर अंग्रेजों को एक करोड़ रूपये बदले में देगा।
3. अंग्रेजों को कलपी तक की जमींदारी, फ्रांसीसियों को बाहर निकालने तथा अंग्रेजी सेना का खर्च आदि भी मीर जाफर को देना होगा।

सन्धि की सभी शर्तो को स्वीकार करते हुए मीर जाफर एवं कलकत्ता कौंसिल के सभी सदस्यों ने इस पर हस्ताक्षर कर दिये।

षड्यन्त्रकारियों में अमीरचन्द एक लालची एवं महत्वाकांक्षी व्यक्ति था। अतः उसने अंग्रेजों से कहा कि यदि उसे 30 लाख रूपया और नवाब के खजाने में 5% की राशि नहीं दी गई तो वह सारे षड्यन्त्र का भण्डाफोड़ कर देगा। ऐसी स्थिति में क्लाइव ने अमीरचन्द की शर्तो को भी स्वीकार करते हुए एक जाली सन्धि–पत्र तैयार करवाकर उस पर एक अन्य अंग्रेज से वाटसन के फर्जी हस्ताक्षर करवा लिये। इस प्रकार क्लाइव ने दुरंगी नीति का इसमें अनुसरण किया।

अब क्लाइव ने नवाब के विरूद्ध षड्यन्त्रकारियों का गुट तैयार कर उससे शिकायत की कि उसने अलीनगर की सन्धि की शर्तो का ईमानदारी से पालन नहीं किया है। अतः अब उसे नवाब के पद पर बने रहने का कोई अधिकार नही है। इसी बीच सिराज के दरबार का अंग्रेज रेजीडेण्ट भी चुपचाप कलकत्ता भाग गया और क्लाइव ने सेना सहित प्लासी की ओर प्रस्थान किया।

युद्ध – क्लाइव के प्लासी की ओर प्रस्थान करने के बाद नवाब अपनी शक्ति को एकत्र कर आगे बढ़ा और 23 जून 1757 ई. को क्लाइव और नवाब सिराजुद्दौला के मध्य युद्ध हुआ। इस युद्ध में नवाब के

सेनापति मीर जाफर, यार लुत्फ और राय दुलर्भ जो कि प्रमुख षड्यन्त्रकारी थे, की विशाल सेनाएँ चुपचाप खड़ी रही। नवाब के साथ मोहनलाल और मीर मदन की छोटी सेनाएँ ही अंग्रेजों के विरूद्ध लड़ीं, फिर भी नवाब की विजय लगभग निश्चित थी, परन्तु मीर जाफर, यार लुत्फ और राय दुर्लभ अपनी सेना सहित अंग्रेजों से मिल बचकर युद्ध क्षेत्र से भाग निकला और मुर्शिदाबाद पहुँचा। उसके साथ उसकी बेगम लूत्फुनिशा भी था, परन्तु वह पकड़ा गया और मीर जाफर के पुत्र मीरन के इशारे पर मुहम्मद जंग द्वारा उसकी हत्या कर दी गई। इसके साथ ही अंग्रेजी सम्राज्य की स्थापना का मार्ग प्रशस्त हो गया।

प्लासी युद्ध के परिणाम – प्लासी का युद्ध वास्तविक युद्ध नहीं था, इसका निर्णय पूर्व में ही हो चुका था तथा इसमें एक छोटी–सी टुकड़ी ने ही भाग लिया था। फिर भी यह युद्ध भारत के निर्णायक युद्धों, में परिणाम की दृष्टि से एक है। इस युद्ध के राजनीतिक, आर्थिक और नैतिक दृष्टि से अनेक महत्वपूर्ण परिणाम निकले।

इस युद्ध के बाद भारतीय राजनीति में अंग्रेजों की प्रधानता कायम हो गई। बंगाल के वे वास्तविक शासक बन गए। मीर जाफर जैसा एक कठपुतली शासक एक करोड़ रूपया तथा 24 परगने की जमींदारी भी कम्पनी को प्राप्त हो गई। इससे कम्पनी की बंगाल में नीवं जम गई और बंगाल से प्राप्त इस धन से उसे कर्नाटक के तीसरे युद्ध युद्ध में सफलता मिली। इस युद्ध से मुगल सम्राट की स्थिति पर बुरा असर पड़ा। बंगाल से उसके लिए एक निश्चित राशि कर के रूप में आती थी, लेकिन एक विदेशी कम्पनी ने उस नवाब को गद्दी से हटा दिया और वह कुछ भी नही कर सका। उसकी आय का एक प्रमुख स्त्रोत बन्द हो गया। बंगाल एवं बिहार पर कम्पनी का प्रभुत्व कायम हो जाने से कम्पनी की आर्थिक स्थिति मजबूत हो गई। कम्पनी के सभी अधिकार सुरक्षित हो गये तथा उसने बंगाल, बिहार तथा उड़ीसा में नई–नई फैक्टरियों की स्थापना की। इससे उनके व्यापार में वृद्धि हुई। अंग्रेजों ने अब बंगाल में लूट प्रारम्भ कर दी और अब वे भारतीय माल खरीदने के लिए इंग्लैण्ड से सोना–चाँदी न मँगाकर अपने भारतीय साधनों द्वारा ही माल खरीदने में सक्षम हो गये।

नैतिक दृष्टि से प्लासी के युद्ध का परिणाम बड़ा ही अहितकारी निकला। बंगाल के धन को पाकर अंग्रेज अधिकारी बहुत लालची हो गये और बार–बार धन प्राप्त करने के लिए उन्होंने बड़े अत्याचार करने प्रारम्भ कर दिये। उन्होंने नवाब और जनता को, दोनों को लूटना प्रारम्भ कर दिया। वास्तव में

प्लासी का युद्ध सैनिक दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण न होकर अपने परिणामों की दृष्टि से ही अधिक महत्वपूर्ण था। वाटसन ने ठीक ही लिखा है कि, ''प्लासी का युद्ध केवल कम्पनी के लिए ही नही, अपितु सामान्य रूप से समस्त ब्रिटिश राज्य के लिए असाधारण महत्व का था।''

बंगाल के नवाब मीर कासिम के कार्यो का मूल्यांकन –

मीर कासिम ने अंग्रेंजो की सहायता से 5 अक्टूबर, 1760 ई. को बंगाल का नवाब बना तथा नवाब बनने के बाद उसने निम्नलिखित कार्य किए –

1. **प्रशासनिक सुधार –** मीर कासिम ने अपने प्रशासन में सुधार करते हुए बंगाल और बिहार के उपद्रवी और विद्रोही जमींदारों को परास्त किया तथा राजस्व की वसूली के लिए योग्य एवं विश्वसनीय कर्मचारियों की नियुक्ति की। उसने अपने राज्य से भ्रष्टाचार को समाप्त कर राज्य की आय को सुनिश्चित करने का प्रयास किया तथा मीर जाफर के समय किए गए धन के गबन को उसने अधिकारियों से कठोरता पूर्वक वसूल किया। इससे उसकी आर्थिक स्थिति ठीक हो गई।
2. **आर्थिक सुधार –** मीर कासिम ने अपने राजकोष को भरने के लिए अनेक बेईमान लोगों की सम्पत्ति को छीन लिया तथा कृषि क्षेत्र में सुधार कर 'कर' (Tax) वसूलने की निश्चित व्यवस्था की।
3. **सेना में सुधार –** मीर कासिम यह भली–भांति जानता था कि कम्पनी की सेना द्वारा बंगाल में किसी प्रकार का सुधार कार्य सम्भव नही है। अतः उसने अपनी स्वयं की सेना में सुधार लाने के लिए तथा उसे यूरोपीय ढंग से प्रशिक्षित करने के लिए समरू नामक एक जर्मन को अपनी सेना में नियुक्त किया। अपनी सेना को उसने नवीनतम अस्त्र–शस्त्रों से लैस किया।
4. **राजधानी परिवर्तन –** मीर कासिम की राजधानी मुर्शिदाबाद अंग्रेजी केन्द्र कलकत्ता के अधिक निकट होने के कारण यहाँ अंग्रेजों के निरन्तर हस्तक्षेप की सम्भावना बनी रहती थी। अतः उसने अपनी राजधानी मुंगेर में हस्तान्तरित कर दी तथा यहाँ उसने बन्दूकें व गोले बनाने के कारखाने स्थापित किए।
5. अंग्रेज 1717 ई से ही बिना चुंगी दिए 'दस्तक' के प्रयोग द्वारा कम्पनी का व्यापार करते थे। इसके साथ ही अब वे इस दस्तक का अत्यधिक दुरूपयोग करने लगे तथा भारतीय व्यापारियों के माल को भी अपना बताकर उन्हें भी चुंगी मुक्त करा देते थे। इससे उसे निरन्तर नुकसान हो रहा था। मीर कासिम ने इसे रोकने का भरसक प्रयास किया, परन्तु इसे अंग्रेजों ने स्वीकार नहीं किया और वे मनमानी करते

रहे। अतः मीर कासिम ने क्षुब्ध होकर भारतीय व्यापारियों को भी बिना शुल्क के व्यापार करने की अनुमति प्रदान कर दी। इससे अंग्रेज व्यापारी भी भारतीयों के समकक्ष आ गए और अब उन्हें अपने व्यापार में घाटा होने लगा। अतः अब अंग्रेजों और नवाब के मध्य युद्ध आवश्यक हो गया और इसी के परिणामस्वरूप बक्सर का युद्ध (1764 ई.) हुआ।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि मीर कासिम भले ही अंग्रेजों की सहायता से बंगाल का शासक बना था, परन्तु वह स्वतन्त्र विचारो वाला व्यक्ति था। उसे यह कतई बर्दाश्त नहीं था कि कम्पनी के अधिकारी उसके आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करें। अतः बंगाल में वास्तविक शासक कौन था नवाब या कम्पनी, इसी प्रश्न को लेकर ही दोनों में संघर्ष हुआ।

बक्सर का युद्ध : विवेचना

पृष्ठभूमि – बक्सर के युद्ध की पृष्ठभूमि मीर कासिम के नवाब बनने के बाद उसके कार्यो एवं कम्पनी के स्वतन्त्र और शासक की तरह व्यवहार करने के कारण पहले ही तैयार हो चुकी थी। अतः दोनों पक्ष युद्ध की तैयारी करने लगे। कलकत्ता कौंसिल ने पटना में हथियार भेजना प्रारम्भ कर दिया जिसे नवाब ने मुंगेर में रोक लिया। इस पर एलिस ने पटना पर अधिकार कर लिया। नवाब ने एक सेना भेजकर पटना को अंग्रेजों से मुक्त कर लिया। फलतः कलकत्ता की कौंसिल ने मीर कासिम के विरूद्ध युद्ध की घोषणा कर उसे अनेक स्थानों पर हरा दिया। इस पर उसने अपनी राजधानी की सुरक्षा की व्यवस्था कर पटना पर पुनः आक्रमण कर दिया, जिसमें उसने 148 अंग्रेज कैदियों को मौत के घाट उतार दिया। इसी के मध्य एडम्स ने नवाब को बुरी तरह से पराजित कर उसे भागने पर विवश कर दिया। मीर कासिम ने भाग कर अवध के नवाब शुजाउद्दौला के यहाँ शरण ली। मीर कासिम के अवध चले जाने के बाद अंग्रेजों ने दिसम्बर 1763 ई. में मीर जाफर को पुनः बंगाल का नवाब बना दिया।

अवध में मीर कासिम ने पहुँचकर वहाँ के नवाब शुजाउद्दौला को अपनी ओर मिला लिया। इस समय मुगल सम्राट शाह आलम भी यहाँ था। अतः उसने भी मीर कासिम को सहायता देने का आश्वासन दिया। अब इन तीन शासकों का एक गठबन्धन तैयार हो गया। इन तीनों की संयुक्त सेना से अंग्रेज सेना को बक्सर के मैदान में 22 अक्टूबर, 1764 ई. को युद्ध हुआ, जिसमें गठबन्धन की सेना पराजित

हो गई। मीर कासिम युद्ध–क्षेत्र से भाग गया और इधर–उधर भटकता रहा। अवध का नवाब शुजाउद्दौला रूहेलखण्ड भाग गया। इस प्रकार इस महत्वपूर्ण युद्ध का अन्त हो गया।

बक्सर युद्ध के परिणाम – बक्सर के युद्ध के अनेक महत्वपूर्ण व स्थायी परिणाम निकले। इस युद्ध ने अंग्रेजों के प्लासी के युद्ध के अधूरे कार्यो को पूरा कर दिया। बंगाल की गद्दी पर अंग्रेजों के कठपुतली नवाब का शासन स्थापित हो गया। इस युद्ध ने अंग्रेजों को उत्तरी भारत की सर्वश्रेष्ठ शक्ति बना दिया तथा भारतीय सेना की कमजोरी उनके सम्मुख प्रकट हो गई। मुगल सम्राट अंग्रेजों की पेंशन याफ्ता बन गया तथा उसने बंगाल, बिहार तथा उड़ीसा की दीवानी अंग्रेजों को सौंप दी।

इलाहाबाद की सन्धि (1765 ई.) पर टिप्पणी

बक्सर के युद्ध में अवध के पराजित नवाब और मुगल सम्राट शाह आलम के मध्य जो सन्धि हुई थी, उसे इलाहाबाद की सन्धि के नाम से जाना जाता था। इसकी शर्ते निम्नलिखित थी –

- अवध के नवाब शुजाउद्दौला को उसका राज्य लौटा दिया गया तथा कड़ा और इलाहाबाद के जिले उससे छीनकर शाह आलम को दे दिए गए।
- नवाब ने कम्पनी को बक्सर के युद्ध की क्षतिपूर्ति के लिए पचास लाख रूपए दिए।
- अवध की सीमा–रक्षा के लिए कम्पनी ने उसे सैनिक सहायता देना स्वीकार कर लिया।
- अवध के राज्य में बिना किसी तरह की चुंगी दिए अंग्रेजों को व्यापार करने की अनुमति दे दी गई।

इस सन्धि से अवध का नवाब सैनिक सहायता के लिए अंग्रेजों पर आश्रित हो गया तथा अवध में अंग्रेजों का हस्तक्षेप बढ़ गया।

इस सन्धि के साथ ही अंग्रेजों की ओर से क्लाइव ने मुगल सम्राट शाह आलम से पृथक सन्धि की। जिसके अनुसार, उसने अंग्रेजों को बंगाल, बिहार, उड़ीसा की दीवानी दे दी गयी और बदले में अंग्रजों ने उसे कड़ा व इलाहाबाद के जिलों के साथ 26 लाख रूपए वार्षिक पेंशन देना स्वीकार किया।

प्लासी व बक्सर के युद्धों का तुलनात्मक मूल्यांकन (टिप्पणी)

प्लासी एवं बक्सर के युद्धों को भारतीय इतिहास में अंग्रेजों के शासन स्थापना की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान है। इन युद्धों के परिणामस्वरूप सम्पूर्ण बंगाल पर अंग्रेजी राज्य कायम हो गया और धीरे–धीरे इन्हें अपने साम्राज्य के विस्तार करने का आधार तैयार हो गया और एक दिन सम्पूर्ण भारत अंग्रेजों के अधीन हो गया ।

प्लासी का युद्ध एक नाटक मात्र था और सिराजुद्दौला एक व्यापक षड्यन्त्र का शिकार बना, जब कि बक्सर के युद्ध में दोनों पक्षों में भीषण संघर्ष हुआ था। यदि प्लासी के युद्ध में मीर जाफर अपने स्वामी के साथ विश्वासघात नहीं करता, तो अवश्य ही इस युद्ध में अंग्रेजों की हार होती। सैनिक दृष्टि से हालांकि प्लासी के युद्ध का कोई महत्व नहीं था, परन्तु इसके परिणाम व्यापक थे। बक्सर का युद्ध एक भयंकर युद्ध था जिनमें अंग्रेजों की रणकुशलता भारतीयों से अधिक श्रेष्ठ सिद्ध हुई।

प्लासी का युद्ध छल–कपट का उदाहरण था, जबकि बक्सर में ऐसा नहीं था। बक्सर के युद्ध में अंग्रजों ने तीन–तीन शक्तियों की सम्मिलित सेना को पराजित कर अपनी श्रेष्ठता सिद्ध की थी। इस कारण से इस युद्ध के परिणाम भी प्लासी के युद्ध से ज्यादा महत्वपूर्ण रहे थे।

बंगाल के द्वैध शासन की प्रमुख विशेषताएं एवं दोष –

1765 ई. को इलाहाबाद की सन्धि से ईस्ट इण्डिया कम्पनी को दीवानी का अधिकार बंगाल, बिहार एवं उड़ीसा में मिल गया था। अतः अब कम्पनी ने यहाँ जो शासन–व्यवस्था लागू की उसे 'द्वैध शासन' कहा जाता है। द्वैध शासन के अन्तर्गत प्रशासनिक दायित्व तो नवाब के ऊपर था, परन्तु कर की वसूली का समस्त कार्य कम्पनी के पास था। इसके लिए बंगाल में प्रशासन के लिए दो अलग–अलग अधिकारी नियुक्त किए गए। एक, दीवान जो अंग्रेजों का विश्वासपात्र था, नवाब के प्रशासन के लिए तथा दूसरे, नायब नाजिम जो कर (राजस्व) वसूली के लिए उत्तरदायी था। इस प्रकार बंगाल में दोहरी व स्वतन्त्र व्यवस्थाएँ कायम हो गई। कम्पनी एवं नवाब की इस व्यवस्था में बंगाल के धन पर पूरा अधिकार कम्पनी का हो गया तथा प्रजा के प्रति उसका कोई कर्त्तव्य नहीं रहा। दूसरी तरफ, नवाब के पास न धन था और न ही सेना, परन्तु प्रजा की समस्त जिम्मेदारी उसी के पास थी।

दीवानी अधिकारों के प्राप्त हो जाने से कम्पनी का प्रमुख कार्य मालगुजारी वसूल करना तथा कुछ हद तक न्याय करने का कार्य भी मिल गया। कम्पनी ने इन दोनों कार्यो का दायित्व 'मुहम्म रजा खाँ' तथा 'राजा सिताबराय' नामक दो भारतीय अधिकारियों को सौंपा गया। इस कार्य के लिए प्रमुख कार्यालय मुर्शिदाबाद एवं पटना में स्थापित कर दिए गए तथा कम्पनी ने निजामत अर्थात् प्रशासन के लिए नवाब को 53 लाख रूपए वार्षिक देना निश्चित किया। इस प्रकार इस नई योजना के अन्तर्गत कम्पनी के नियन्त्रण में तलवार एवं धन दोनों आ गए।

लाभ – इस व्यवस्था से कम्पनी को अत्यधिक लाभ हुआ तथा वास्तविक शक्ति अंग्रेजों के नियन्त्रण में आ गई तथा अंग्रेज अब शासक बन गए। इस व्यवस्था से कम्पनी को सबसे बड़ा लाभ यह था कि उसने बिना जनमत को उद्वेलित किए सारी शक्तियों को आसानी से अपने नियन्त्रण में ले लिया। कम्पनी के पास इस समय ऐसे योग्य और अनुभवी अधिकारियों की कमी थी, जो बंगाल की लगान–व्यवस्था को संभाल पाते। अतः कम्पनी ने भारतीय अधिकारियों के उपयोग द्वारा ही अपना हित साधा।

दोष – 1767 ई. में क्लाइव के भारत से वापस लौटते ही इस व्यवस्था के अनेक दोष उजागर होने लगे और पूरी व्यवस्था एकदम से लड़खड़ाने लगी। शासन का पूरा–पूरा उत्तरदायित्व वहन करने की क्षमता नवाब में नहीं थी और न ही नवाब कम्पनी पर अपना किसी प्रकार का नियन्त्रण स्थापित कर सकता था, जबकि अंग्रेज कम्पनी के पास सारी वित्तीय शक्तियाँ थी। इसका परिणाम यह निकला कि जनता नवाब एवं कम्पनी के मध्य पीसने लगी उसकी सुनवाई करने वाला बंगाल में कोई नहीं रह गया। कम्पनी के अधिकारियों ने जनता का बुरी तरह से शोषण करना आरम्भ कर दिया। कम्पनी के बनिए एवं गुमास्ते लोगों पर घोर अत्याचार करने को स्वतन्त्र हो गए। लघु एवं कुटीर उद्योग धन्धे बंगाल में प्रायः नष्ट हो गये। शिल्पी एवं कारीगर माल तैयार करते, परन्तु अंग्रेज उनसे सस्ती दरों पर जबरदस्ती माल खरीद लेते थे तथा मना करने पर उन्हें सरेआम कोड़े लगाए जाते थे।

इस प्रकार स्पष्ट है कि द्वैध शासन व्यवस्था नवाब एवं जनता के लिए बड़ी ही हानिकाक सिद्ध हुई।